श्रीः

वन्दना

भस्मनाच्छादितो यद्वत्
स्फुलिंगो न प्रकाशते।
स एवैषत्-प्रमादेन
स्पृष्टो दाहं तनोति च ॥ १॥

तथैकाध्यातो यस्य
सर्वांगम विकासिनीम्।
शक्तिं च तेजसो गुप्ताम्
काश्चिदेवेह वेत्यहो ॥ २॥

पीयूषवर्षिणी वाणी
सरसा काव्यचातुरी।
सर्वतोभद्रपाण्डित्यम्
'प्रात्मगुप्त' विशेषतः ॥ ३॥

योऽसौ दिव्यगुणो

विद्वच्छरण्यो सम्मतः सताम् ।

शापच्युतः

प्रासीत्, कश्चित् ~~स्वच्छन्दो~~

सिद्धो

~~जैनो~~ विद्याधरोऽभवत् ॥ ४ ॥

तं वन्दे ज्ञानिनामग्र्यम्,

शैवाचार्यं महौजसम् ।

~~तपस्विनं~~ सदाचारं, ~~विचार-धार~~

पुण्यश्लोकं सुधीवरम् ॥ ५ ॥

अमृतवाग्भवाचार्यम्,

परमानन्दरूपिणम् ।

स्थितप्रज्ञं महात्मानम्

शक्तिभक्तिसमन्वितम् ॥ ६ ॥

— . —

प्रथम दर्शन

२६ दिसम्बर १९२८ की बात है। मैं उन दिनों पंजाब विश्वविद्यालय के अन्तर्गत चलनेवाली 'प्राज्ञ' परीक्षा के प्रथम ~~द्वितीय~~ वर्ष में श्रीनगर में संस्कृत पढ़ता था। सर्दी की छुट्टियों के अवकाश के दिन थे, मैं अपने घर मातण्ड आया था। मेरे ~~पूज्य~~ दिवङ्गत मामा जी - श्री पं. नन्दलाल जी रवार - जो अनन्तनाग के सी. एम. एस. हाईस्कूल में अध्यापक थे - ने मुझे कहा कि मेरे पास आजकल एक ब्रह्मचारी जी ठहरे हुए हैं। वह संस्कृत के बड़े विद्वान हैं तुम उन के दर्शन करने आजाओ। मामा जी का घर 'मातण्ड' के पवित्र कुण्ड के पास ही था, वहां उन दिनों बिल्कुल कुण्डों के (कमला, विमला, दो कुण्ड) के समीप

मौनी बाबा की धर्मशाला आरा जी के सामने थी।

ही एक धर्मशाला थी¹। उसी के एक कमरे में पूज्यपाद जी रात को रहते थे और प्रातः सायं मामाजी के यहाँ भोजन करने आते थे। संभवतः जौलाई का मध्य था। दिन के 9 बजे के लगभग का समय था। श्री जी पधारे। उस समय इनकी आयु मेरे विचार में तीस और पच्चीस के बीच के वर्षों की रही होगी। छोटा कद, कृश शरीर, तेजस्वी चेहरा, गौरवर्ण, चौड़ी पर थोड़ी दाढ़ी और हलकी सी मूँछे, काले और घुँघराले बाल, धोती और कुर्ता ऊपर ऊनी वास्केट धारीदार। मैंने प्रणाम किया। मुझ से पूछा क्या पढ़ते हो? मैंने कहा मैं हिन्दी पढ़ता हूँ। उन्होंने कहा कौन से ग्रन्थ पढ़ते हो। मैंने

पाद 1. यह धर्मसाला कहलाती थी। इस को मौनी बाबा की धर्मसाला कहते थे। यह बिन्दुकुण्ड के दायें तरफ थी।

नाम बता दिये। मेरे हाथ में महाकवि कालिदास का 'विक्रमोर्वशीयम्' नाटक था। उस का प्रारम्भिक पद्य "वेदान्तेषु यमाहुरेकपुरुषं व्याप्य स्थितं रोदसी" पढ़ने को कहा। मैंने पढ़ा और सुबानी भी सुनाया। उन्होंने पूछा 'वेदान्तेषु' का क्या अर्थ है। मैंने उस समय जो समझा था बता दिया। फिर और भी बातें हुईं। इस के बाद हमारा वहाँ रोज इन के पास आने का क्रम रहा। मुझे इन की संस्कृत पद्यों को पढ़ने की शैली बहुत मधुर लगी। यद्यपि मैं उस समय कुछ विशेषरूप से नहीं जानता था परन्तु इन के अन्दर संस्कृतकाङ्क्षा की ज्ञानगरिमा का प्रभाव मुझ पर पड़ता था।

उन दिनों 'श्री' जी दोनों समय भोजन करते थे। 'प्रदोष' व्रत रखते थे।[*] इस दिन स्वयं भोजन अपने हाथों पकाते थे और मौन व्रत रखते थे। प्रदोष व्रत के दिन मैं उन के पास ही रहता था क्यों कि यदि उन को कुछ कहना होता था या किसी वस्तु की आवश्यकता होती थी तो मुझे हाथों संकेतों से बताते थे या लिख कर देते थे।

मैं शिवरात्रि कर के श्रीनगर चला गया। श्रीजी को मैं ने प्रार्थना की थी कि वह जब श्रीनगर पधारेंगे तो मेरे पास अवश्य आ जायें या मुझे सूचित करें।

'मार्तण्ड' में पण्डित शिवजी कोतदार नामक एक ~~सज्जन~~ सज्जन व्यक्ति रहते थे वह ~~तत्कालीन सरकारी वन विभाग~~ तत्कालीन जम्मू कश्मीर गवर्नमेण्ट के फारिस्ट विभाग में एक सिनियर पदाधिकारी थे।

---

2 यह व्रत 'श्री' जी कई वर्षों तक करते रहे और हज्ज होने के बाद वर्ष ४० से नहीं रहा।

इन के साथ महात्मा जी (श्रीजी) का साक्षात्कार वहां हुआ था। उन का एक पुत्र श्री जियालाल वे अब भी मार्तण्ड में रहते हैं और वैद्य हैं। परन्तु अब रिटायर्ड हैं। यह भी महात्मा जी के अत्यन्त स्नेहपात्र और सेवक थे। पंडित शिवजी महात्मा जी को परम श्रद्धेय मानते थे। महात्मा जी उन को पूर्वजन्म का अपना पिता ~~समझते थे~~ मानते थे।

उन दिनों महात्मा जी अनन्तनाग तहसील में अवस्थित गौतमनाग, अनन्तनाग (तीर्थ नागबल) गुसाईं गुण्ड ~~इस आ~~ उमादेवी (ब्रारि आंगन) ~~इसी~~ इन आश्रमों में जाते थे और कुछ दिनों रह भी थे, उन दिनों इन स्थानों में साधना करने वाले कालीपद कश्मीरी महात्मा रहते थे। यह शायद इन्हीं दिनों की बात थी जब कि महात्मा जी को एक विचित्र व्यक्ति से एक रात साथ रहने का अवसर आया था

बात इस प्रकार की-

महात्मा जी ~~कि~~- विजेश्वर (बीजबिहारा) से वितस्ता (झेलम) की ऊर्ध्व प्रवाह के साथ किनारे से चलते नदी को पार करने के लिये पुल को ढूंढ रहे थे और उस पार जाना चाहते थे। शाम का समय था, महीना कार्तिक का था, परन्तु पुल का पता नहीं लगता था। इतने में एक वृद्ध मुसलमान जिस के पैरो में 'पुलहोर' (घास का ~~अ~~ चपलनुमा जूता) था। वह महात्मा जी की पारजाने के प्रयास को देखकर बोला, बाबाजी पार जाना चाहते हो! चलो मैं भी पार ही जाना चाहता हूं। वह वृद्ध नदी की ऊपर से चलता ~~चला~~ गया और ~~फिर~~ दूसरे किनारे पर खड़े होकर महात्मा जी को आवाज देने लगा। महात्मा जी ने कहा मैं तो नहीं आसकता हूं। इतने में वह आदमी पानी के ऊपर से ही चलता हुआ महात्मा जी के पास वापिस आगया और बोला नहीं आसकते तो चलो मैं भी तुम्हारे साथ ही रात को किसी जगह रहूंगा।

फिर दोनों कुछ दूर चल कर एक घर में रात को ठहरे। बुड्ढे ने महात्मा जी से कहा बाबा जी, यह भी एक इल्म (विद्या) है इस से खुदा नहीं मिलता। महात्मा जी ने यह घटना मुझे एक प्रसंग में इस के कई वर्षों के बाद सुनाई थी और कहा था कश्मीर में मुसलमान भी कई गुणी सन्त हैं।

अब की बार तो महात्मा जी कश्मीर में पूरे १२ महीने रहे थे, और माघ की कठिन सर्दी के दिनों में भी कभी कभी मटन और अनन्तनाग के चश्मों में नहाते थे और तैरते रहते थे। एक बार अनन्तनाग में कुछ कश्मीरी साधुओं ने उन पर आक्षेप पूर्वक नाराजगी प्रकट की थी कि "आप तो ब्रह्मचारी" हैं, ब्रह्मचारी को तैरना धर्मशास्त्र आज्ञा नहीं देता। परन्तु उन्होंने इस की परवाह नहीं की। बाद में उन्हें पता लग गया था कि जिस व्यक्ति से इस शास्त्रीय विवाद करते थे वह बोलने में संस्कृत के उद्भट विद्वान हैं।

उस समय महात्मा जी जम्मू से पैदल ही कई स्थानों पर ठहरते ठहरते कश्मीर घाटी में पहुंचे थे। जम्मू से चलकर ऊधमपुर आकर कुछ दिन ठहरे थे। वहां से "चिनानी" में जोकि एक प्रसिद्ध कस्बा है कुछ दिन ठहरे थे। वहां की एक घटना सुनाते थे कि वह एक 'ढाबा' में गये। ढाबा वाले ने उन्हें आदर से भोजन खिलाया, महात्मा जी ने भरपेट भोजन खाया दो तीन सब्जियां, अचार, पापड़ भी थे। महात्मा जी ने ढाबा वाले को कहा कि कितने पैसे दे दूं। उस ने कहा क्या तुम ने खाया, पैसे क्या बने जो मैं ले लूं, कुल तो पूरे दो पैसे भी नहीं बने।

महात्मा जी ने यह बात उस समय के सस्तेपन के प्रसंग पर एक दो बार कही थी, कहने के बाद वह कहते थे 'श्रीनाथ जी, इन बातों को लिखना'। मैं तो उस समय इस पर अधिक ध्यान न देता था, परन्तु आज यह लिखते समय उन का वह कथन याद आ रहा है।

काश्मीर में पुनरागमन

सन ४२ ई० में महात्मा जी से फिर मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस समय मैं "विशारद" में पढ़ता था शायद प्रथम वर्ष में। मैं श्रीनगर में एक रमणीक स्थान गौरीशंकर मन्दिर की नवनिर्मित धर्मशाला के एक कमरे में अकेला रहता था। मार्तण्ड में महात्मा जी मेरे मामाजी स्वर्गीय पं० श्रीनन्द लाल के पास पूर्ववत् ठहरे थे। वहाँ से श्रीनगर आये थे। श्रीनगर में मुझे उसी धर्मशाला में मिले थे ठहरे थे वह "श्रीकण्ठ नेहरू" के घर। एक दिन प्रातः ही मेरे पास सामान लेकर आगये। कुछ क्रोध में थे क्योंकि नेहरू के घर में उनको कुछ अपमान हुआ था इस लिये उनका घर छोड़ दिया था फिर कभी वहाँ नहीं गये। उन दिनों श्रीनगर में शेख साहेब का स्वतन्त्रता संघर्ष चलता था। एक साधारण सी बात पर हिन्दू-मुस्लिम झगड़ा शुरू हुआ और आन्दोलन

12

श्रीनगर के गुरुद्वी अहलमर में था। शाम का समय था महात्माजी जैसे शाम को सैर को जाते थे मैं भी उन के साथ चला। हम लोग अब जुमीराकदल की तरफ चले। महाराजा बाजार पर पहुंचे ही थे कि मुसलमानों ने हमें पकड़ा, जाते भी रास्ते में हिन्दू जारहे थे। भागने लगे, कई मुसलमान गुन्डों ने छुरियां भी निकाली थी। हम दोनों अमीराकदल की तरफ भागते गये। मुझे महात्माजी का पता न चला न उन को मेरा। गिरते उठते रास्ते में अपने को बचाता हुआ जुमी अमीराकदल के प्राथमिक बाजार में पहुंचा, जहां महात्मा जी मुझे मिले, उन को भी चोटें पड़ी थी। फिर हजूरीबाग की पुलिस चौकी पर हमें कुछ लोग लेगये, क्यों कि वहां पुलिस कुछ पूछताछ करती थी। हमें वहां से छुट्टी मिली, फिर कहां जाते क्यों कि अमीराकदल से ही मारकाट होने लगी थी। महात्माजी मुझे और दो तीन हिन्दुओं को

एक जम्मूवासी डोगरा के मिलाकर लेगये वह उनके परिचित थे। हम सब वहीं रात को रहे भोजन आदि भी उनके यहाँ ही हुआ। प्रातः हम सब वहाँ से चलकर अपने मुहल्ले में पहुंचे।

इन दिनों में कई भद्रपुरुष महात्मा जी के सम्पर्क में आये। जिन में यहाँ पर कुछ व्यक्तियों का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूं। - यह है -

श्री पण्डित टीकालाल रैणा जी

यह श्रीनगर में जम्मू कश्मीर राज्य के धर्मार्थ विभाग के एक निरीक्षक पदाधिकारी थे, श्रीनगर के रहने वाले सम्पन्न एवं धार्मिक प्रकृति के व्यक्ति थे। इन के यहां महात्मा जी श्रीनगर में इन के ~~निवासस्थान~~ घर पर रहते थे। महात्मा जी का अत्यन्त श्रद्धा-पूर्वक आदर करते थे। इन का सारा परिवार महात्मा जी का भक्त था। महात्मा जी की सारी व्यवस्था करते थे। यह दिल्ली में भी

गलबर्गे में श्री महात्मा जी से मिलने के लिये आते थे यद्यपि यह एक बहुत वृद्ध थे परन्तु निरन्तर अपने स्वामी जी की स्नेह और श्रद्धा की भावना से यहां भी आते रहे। इन्होंने महात्मा जी के कहने पर उन के पृथक और एकान्त में रहने के लिये श्रीनगर के रामबाग में अवस्थित धर्मार्थ विभाग के अन्तर्गत एक सरकारी भवन में ठहरने का प्रबन्ध किया था। यह उन दिनों श्रीनगर का एक रमणीक एवं शान्त क्षेत्र था। यहां पर उन दिनों एक ही कश्मीरी पण्डित का गृहस्थ था। भोजन की व्यवस्था पण्डित टीकालाल जी ने इन के लिये उसी घर में की थी। केवल भोजन के लिये प्रातः सायं वहां जाते थे और सरकारी भवन में एकान्तवास करते थे। मुझे कहा था तुम मेरे साथ ही रात को रहो। मैं गुंडी अहलमर के अपने निवास से वहीं रात को सोने के लिये आता था। जाड़े का मास था। हमारी पाठशाला में -

प्रातःकालीन कक्षाओं .. लगती थीं। मैं स्कूल से आकर भोजन कर के मध्याह्न में ही महात्मा जी के पास पहुंचता था। रात को भी कभी कभी उन के पास ही रहता था। उन्हीं दिनों मैं ने आचार्य अभिनवगुप्त के कुछ स्तोत्र लिखवाये जो मैं ने किसी प्राचीन ग्रंथ से (पाण्डुलिपि) नकल किये थे। महात्मा जी उन को बड़े आनन्द पूर्वक पढ़ते थे और कहते थे यह तो ऐसा लगता है जैसे कि मेरे ही विचार हैं। तब तक उन्हों ने कश्मीरी शैवदर्शन का कोई ग्रन्थ नहीं देखा था। इस के बाद इन की जिज्ञासा बढ़ गई और उन्हों ने पंडित टीकालाल जी के द्वारा कश्मीरी शैव दर्शन के बहुत से ग्रन्थों को मंगवाया और पढ़ते रहे। इन में "ईश्वर प्रत्यभिज्ञा" "परमार्थसार" आदि उल्लेख हैं। वह निरन्तर इन को पढ़ते रहते थे और ऐसा लगता था जैसे उन को एक विशेष दिशा का भान होता था। इन दिनों मुझे भी उन के ~~[illegible]~~ गम्भीर ज्ञान

और प्रकाण्ड पाण्डित्य तथा साधनामार्ग को विशेष रूप से समझने का सुअवसर मिला था। मैं उन दिनों कश्मीरी विद्वानों के साहित्य और राजतरंगिणी को पढ़ता रहता था और महात्मा जी को कश्मीर के धार्मिक विद्वानों और ऐतिहासिक स्थानों का जीवन करता था इस विषय में वह पहले से ही पर्याप्त ज्ञान रखते थे। उन दिनों उन के साथ निरन्तर एक मास तक मैं रातदिन रहा था और उन्होंने बहुत से रहस्यमय उपदेश दिये थे जिन का ~~प्रभाव~~ प्रभाव मुझे उन के समीप और भी अधिक खेंचता गया। जब मैं उन से पृथक हुआ मुझे बहुत दिनों तक सूना सा लगता था। महात्मा जी इस के बाद शायद 'शारदा देवी' का दर्शन करने के लिये कश्मीर घाटी के पश्चिमोत्तर क्षेत्रों की तरफ चले गये थे।

श्री सर्वानन्द जी

यह भी श्री टीकालाल जी के ~~स~~ घर पर ~~स~~ महात्मा जी के साथ रहते थे। ये तो पुलिस के व्यक्ति। नौकरी छोड़ दी थी। और 'साधू' बनगये थे। जादुभाषी थे। महात्मा जी को यद्यपि इन का स्वभाव अच्छा न लगता था तथापि वह ~~स्वयं~~ साधु मान कर इन से सद्व्यवहार ही करते थे। एक दिन इन की स्पष्टवादिता की आपनी सीमा से को लांघ गई। महात्मा जी ~~के~~ का मुख्यक उपहास पूर्वक मजाक उड़ाने लगे। महात्मा जी श्री टीकालाल जी का घर छोड़कर आगये। श्री सर्वानन्द जी से फिर कभी न मिले। उन का अन्त भी बहुत बुरी तरह होगया।

श्री बलजीनाथ जी पण्डित

~~मैं~~ उन दिनों बलजीनाथ जी विद्यार्थी ही थे। मैं इन को लेकर पं. टीकालाल जी के घर महात्मा जी के दर्शन करने के लिये गया। उन दिनों भी यह आगे सौरफल्क में रहते थे

और संस्कृत पढ़ना प्रारम्भ किया था।
यह उन के साथ प्रोफेसर बलजिन्नाथ
का प्रथम समागम था। मैं तो महात्मा जी
के पास आता ही रहता था। जब भी मैं
जाता था। महात्मा जी इन का कुशल समाचार
अत्यन्त जिज्ञासा और उत्सुकता से
पूछते रहते थे। जिस को लगता था कि यह
महात्मा जी के इतने निकटतम सम्पर्क
में आकर इन के विशिष्ट प्रेमपात्र बने थे।

श्री भास्करनाथ जाडू

यह भी महात्मा जी के विशिष्ट
स्नेहपात्र रहे हैं। मेरे साथ पढ़ते थे और
'श्रीनगर' के रहनेवाले थे। इस ने
'श्री' जी को कुछ 'गुप्त' महात्माओं का
परिचय दिया था जिस पर 'श्री' जी विशेष
रूप से खोज करने लगे थे। महात्मा जी ने
कहा था कि 'भास्कर' किसी सिद्धपीठ से
ही आया है। यह अत्यन्त अल्पायु में ही
१९३९ में कैलासवासी हुए। महात्मा जी
को इस पर बहुत दुःख और पश्चात्ताप
हुआ था जब मैंने इन को कहा था कि 'भास्कर
नाथ' का स्वर्गवास हुआ।

पुनर्मिलन

सन १९३२ में महात्मा जी का दर्शन और सहवास फिर प्राप्त हुआ। मैं श्रीनगर में 'शास्त्री' प्रथमवर्ष में पढ़ता था। महात्मा जी 'मार्तण्ड' आये थे। मैंने सुना इतने में श्री जी श्रीनगर आये। श्री टीकालाल रैणा जी के घर ही ठहरे थे। मैं आता जाता ही था। महात्मा जी से मैं प्रायः कश्मीर के अतीत विद्वानों और ऐतिहासिक स्थानों के विषय में चर्चा करता ही रहता था। कुछ तो उन्होंने देखे भी थे। कुछ नहीं। इन में एक दिव्य तीर्थ "हंसवागीश्वरी" नामक तीर्थ था। इस के विषय में 'राजतरङ्गिणी' के प्रारम्भक कश्मीरवर्णन में लिखा है :-

"देवी भेडगिरेः शृङ्ग
गङ्गोद्भेद शृङ्गो स्वयम्,
सरोऽन्तर्दृश्यते यत्र,
~~हंसस्वरूपा~~
हंसरूपा सरस्वती ~~॥~~॥"

इस अत्यन्त लुप्तप्राय सिद्धक्षेत्र को डॉ. स्टीन ने खोजा है और इस का विस्तृत वर्णन लिखा है। यह स्थान कश्मीर के दक्षिण ~~पश्चिमीय~~ पश्चिमीय पर्वतों में अवस्थित है और कुछ दुर्गम ही है। मैंने जब महात्मा जी से कहा तो उन को भी ~~इच्छा~~

जिज्ञासा प्रकट की। श्री टीकालाल जी ने कहा हम इस का प्रबन्ध करा देंगे। यह स्थान कश्मीर के पुलवामा तहसील में 'हाल'[1] ग्राम के समीप है। महात्मा जी के वहाँ कुछ सेवक भी थे जो टीकालाल जी के परिचय के आदमी थे। उन में एक पण्डित दामोदर रवाल नामक एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। महात्मा इस ग्राम में पहले भी रह चुके थे। यहाँ पर रह कर एक वर्ष पहले ही 'आत्मविलास'[2] की रचना की थी।

आषाढ़ का महीना था। महात्मा जी के साथ मैं 'पुलवामा' पहुँचा। वहाँ से हम दोनों टांगे पर सवार होकर 'हाल' के लिये रवाना हुए। ग्रीष्म की हरियाली में चारों ओर रमणीय खेतों के बीच में होकर टांगा चल रहा था। साहित्यिक चर्चा हो रही थी। महात्मा जी ने अपने श्रीमुख से अपनी बाल्यकाल की रचना सुनाई। रचना इस प्रकार है:-

'वाणी विरिञ्चि हरि शेष पुरन्दराणाम्
[illegible] मेति महती निपुणापि वाणी।

---

[1] [illegible] 'आत्मविलास' मे 'हवाला' लिखा है
[2] इस का वर्णन 'आत्मविलास' के अन्त में है।

वाणी * तव स्तवविधौ मम बालिशस्य,।
हे नाथ शङ्कर कथं सफला भवित्री ।।

उन के बोलने का प्रकार और उन की उस समय की भक्तिविह्वलता अवर्णनीय थी। मैंने कहा महात्मा जी, यह तो बहुत मधुर और सुगम पद्य है। वह बोले - "यही तो प्रसादगुण[1] है।"

हम हाते चार बजे पहुंचे। एक उन की सेविका थी मिथला ब्राह्मणी। उस के घर में रहे। पता लगा कि पण्डित 'धर्मेन्द्रस्वामी' कहीं बाहिर गये हुए हैं। उन के लौटने पर ही यज्ञ का प्रबन्ध हो सकता है। मैं भी फिर महात्मा जी के साथ ही रहा। यहीं पर वह मुझे 'आत्म-विलास' के पद्यों को सुनाते थे और उन का नवीन दार्शनिक गम्भीरता से भरा होता था। मैंने 'आत्मविलास' की नकल कर के उन को सुन्दर अक्षरों में डूस की नकल दे दी और मूलप्रति[2] उन की आज्ञानुसार अपने पास रक्खी।

---

१. शीघ्र समझमें आनेवाले और मधुर शब्दों की रचना को 'प्रसाद' गुण कहते हैं।

2 यह मेरे पास अब भी सुरक्षित है

वहाँ हमें एक ब्राह्मण के पास 'शारदा माहात्म्यम्' देखने को मिला। स्वामीजी ने कहा इस की नकल करो। मैं नकल करने लगा क्योंकि ग्रन्थ 'शारदा लिपि' में था अतः महात्माजी पढ़ते ही सकते थे। अपने पास इस की प्रति रखने की लालसा से भी मैं नकल करने लगा। यह महात्म्य लिखते थे। एक स्थान पर वहाँ वर्णन भी पढ़ते थे। एक स्थान पर वहाँ आया कि शारदा भगवती भक्तों को पक्षी (तोता या मैना) के रूप में दर्शन देती है। यह पढ़ते ही महात्मा जी उछल कर गद्गद हो गये। मैंने कहा महात्माजी! क्या बात है? यह बोले गतवर्ष मैं शारदा क्षेत्र गया था। मेरे मन में तब से यह भावना हो गई थी कि यहाँ मुझे कुछ विशेष चमत्कार देखने को नहीं मिला। मेरे मन में कुछ आशंका सी होगई थी परन्तु आज मुझे इस का समाधान होगया। मैंने कहा अब कौन बात हुई

वह बोले –

'जब मैं शारदाक्षेत्र गया था वहाँ भगवती की मूर्ति का दर्शन करके बाहर किसी शिला पर बैठा था। उसके मेरे सामने एक पेड़ था। मैं उधर देखने लगा, देखता क्या हूँ कि पेड़ पर तोते का एक जोड़ा बैठा है। मैं गौर करके उन की तरफ देखता रहा। कुछ देर बाद वह उड़ गये। इस के बाद मेरे मन मे आया कि यहाँ कश्मीर में तोते तो होते ही नहीं यह कहाँ से आये। फिर वहाँ के किसी व्यक्ति से पूछा कि यहाँ तोते भी होते हैं उस ने कहा यहाँ तोते कहाँ। हम ने कभी नहीं देखे। मैं फिर चुप हो गया और वहाँ से चला आया'। वहाँ आज मेरी शंका दूर हो गई। श्रीनाथ जब यह 'माहात्म्य' छपेगा। इस बात को अवश्य लिखना।

यों ही दस दिन बीत गये। श्रीदामोदर जी ने यात्रा का सारा प्रबन्ध किया। हम

१२ आदमी थे एक स्त्री भी थी। प्रातः
खा पीकर हम पश्चिम की दिशा में चले।
एक नदी पार कर के आगे हमारा
रास्ता एक घाटी में से होगया। यह
घाटी दोनों तरफ चीड़ और देवदार के
पेड़ों से आवृत पर्वतमाला से बनी थी।
बीचों बीच कलकल करती हुई नदी
बहती थी। किसी ने कहा यह नदी
'भुजा भारी' से आरही है। यह इस
तीर्थ का वर्तमान नाम है। आगे निर्जन
था। रास्ते में हमारे दायें तरफ
सोर भाग में पुरानी ~~स्त~~ ईटें और
कुछ टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों के टुकड़े
बिखरे पड़े थे। इस से यह प्रतीत होता
था कि पहले यहां से लोग आते जाते थे।
~~एक~~ घाटी में होती १२ मील जाकर हमें सामने
एक टीलानुमा ~~पर्वत~~ पहाड़ी दिखलाई दी। यही
'मेरुगिरि' है। इस के ऊपर एक जलाशय
सा है इस का जल निर्मल और मीठा
था। यह सर ~~प्रो~~ चतुष्कोण था

किनारों पर
25
~~में~~ प्राचीन समय के बड़े बड़े तराशे हुए भारी ~~क~~ एवं करीब एक गज चौड़े और एक दो ~~फुट~~ फुट चौड़े पत्थर बिछाये गये थे जो चिकने और घिसे हुए लगते थे। तालाब ~~कीचड़~~ कीचड़ एवं गिरे हुए देवदारु वृक्षों के टुकड़ों से भरा हुआ था। सरोवर के पश्चिमोत्तर कोने में एक चबूतरा था जिस पर कभी शिवलिंग रहा होगा।

हम ने खाना पकाना प्रारम्भ किया इतने में ~~आकाश~~ आकाश पर मेघमाला आगई। हमारे साथ ~~टेन्ट~~ कोई टेन्ट नहीं था। यदि वर्षा होती तो बहुत कष्ट हो जाता। सब ~~सब~~ ने महात्मा जी की शरण ली। उन्होंने कहा चिन्ता मत करो, वर्षा नहीं होगी मैं वह राग गाता हूँ जिस से मेघ चले जायेंगे। बादल काले और ~~अब~~ बरसने को तैयार ~~ब~~ दीखते थे। मेरे मन में महात्मा जी की बात नहीं बैठी। किन्तु, आश्चर्य(जो हुआ) उन्होंने गाना शुरू किया बादल छूटने लगे और आकाश धीरे धीरे निर्मल हो गया।

रात ~~को~~ भजन पूजा और ~~भजन~~ कुछ गाने करते
~~क~~ बीत गई। प्रातः काल सन्ध्या ~~पूजन~~ वन्दनादि
दि कर के चाय पीकर हम इधर उधर
भ्रमण करने निकले। यहां पर एक सपाट
सा मैदान दिखाई दिया जिस में यंत्र
तत्र प्राचीन समय के मकानों की आधार
शिलाएं और पत्थर तराशे हुए बिखरे
पड़े थे और ~~कोसिदेन के लिये~~ यह यात्र
भी दिखाई दिये जिन में कश्मीरी हिन्दू
पूजा आदि के लिये देवताओं के लिये
प्रसाद (चावल खीर आदि) अर्पण करते
थे। हम बहुत ही भावविह्वल हो गये
मैं अवचेतन में शायद सरोवर से
कीचड़ निकालता रहा। जब इस इच्छा से
कि शायद महाकवि कल्हण के
वर्णनानुसार यहां नागेश्वरी का दर्शन
हो। क्योंकि कवि ने लिखा है
'सरो मध्ये दृश्यते यत्र
हंस रूपा सरस्वती'
~~क्योंकि~~ अर्थात् जहां सरोवर में
हंसरूपिणी सरस्वती दिखाई देती है।

महात्मा का भोजन तैयार होगया था
हम ने भोजन किया। सामान बान्ध कर
घोड़ों पर लाद लिया और भगवती
को प्रणाम कर चलपड़े। सांय
७ बजे करीब 'हाल' पहुंचगये। इस
के १ दूसरे दिन मैं बीमार होगया और
महात्माजी वहीं रहे। कहते थे मैं
आकर अमरनाथजी का दर्शन करके
जाऊंगा।

अमरनाथजी की यात्रा में उन्हें वापिस
आते समय पञ्चतरङ्गिणी (पञ्चतरणी) पड़ाव
पर रात को रहना पड़ा। वहीं पर प्रभात के
समय उन्हें भगवान-शिव और पार्वती
के दर्शन युगल यौनमुद्रा में हुए थे।
उन्हों ने कहा कि आकाश तक लम्बे
खड़े हुए आकार रूप से उन्हों ने देखा।
उन को केवल टांगे ही दिखाई दीं और
ऊपर तक उन की दृष्टि नहीं पहुंची।
इस बात का वर्णन महात्मा जी ने मुझे
कई वर्षों के बाद लायलपुर (पाकिस्तान)
में सुनाया था। x.

-x-

परशुराम स्तोत्र और परशुराम जयन्ती – मार्तण्ड में

स्वामी जी ने परशुराम स्तोत्र की रचना की थी। उन्होंने अक्षयतृतीया के दिन जो दिन भगवान परशुराम का आविर्भाव का दिन माना जाता है – भगवान परशुराम जयन्ती शायद पहली बार मार्तण्ड (कश्मीर) में मनाने का श्रीगणेश किया था। यह शायद वर्ष ३५-३६ का समय था। मैं उन दिनों बनारस में ही पढ़ता था उत्सव अच्छी तरह मनाया गया था। इसे को बहुत दिनों तक मार्तण्ड के ब्राह्मण याद करते थे। तब तक स्वामी जी का 'परशुरामस्तोत्र' शायद छपा भी नहीं था।

कश्मीर में फिर दर्शन

मेरा वैसे तो महात्मा जी के साथ पत्र व्यवहार चलता ही रहता था। मैं १९३३ में बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी में 'आयुर्वेद' कालेज में पढ़ने गया था। मैं ग्रीष्म अवकाश में घर आता रहता था। १९३५ का ग्रीष्म ऋतु था मुझे महात्मा जी मार्तण्ड में मिले। अब तक तो उन्हें कश्मीर में उनका भक्त तथा सेवकों का काफी बड़ा वर्ग बन चुका था। पण्डित शिव जी कोतवाल उन दिनों 'बारामूला' में नौकरी करते थे। महात्मा जी के साथ मैं भी बारामूला गया मैंने भी वनविभाग से कुछ पौधे (Medicinal Plants) बनारस ले जाने के लिये संग्रह करने थे। वहाँ महात्मा जी के साथ मैं पण्डित शिव जी के आवास में रहा। यहीं पर महात्मा जी को कोटीतीर्थ शैलपुत्री के पास एक विलक्षण अवधूत से समागम हुआ था। उस को 'चलमा बाबा' कहते थे।

महात्मा जी को उन्होंने बहुत सी ऐसी बातें बताईं जिस से वह बड़े प्रभावित तथा चकित भी हो गये थे। महात्मा जी को उन्होंने पूर्वजन्म की भी बहुत बातें बताईं जो कि महात्मा जी को विश्वसनीय प्रतीत हुईं। उस में कुछ विलक्षण शक्तियाँ भी तो चला आया था। महात्मा जी बारा मूला में ही रहे थे और चकमा बाबा से समागम होता रहता था। परन्तु चकमा बाबा तो चकमा ही दे गये और बारामूला से कहां गये थे किसी को कुछ पता नहीं लगा। महात्मा जी तो कहते रहते थे कि चकमा बाबा बड़े पहुंचे हुए सिद्ध थे।

हरिद्वार में समागम

मुझे महात्माजी ने हरिद्वार से पत्र लिखा था कि बनारस से जब ग्रीष्मावकाश बिताने के लिये कश्मीर जाओगे हरिद्वार में मुझे मिलना। यह सन् १९३२ का वर्ष था। मई के ~~अन्तिम~~ दूसरे सप्ताह में मैं हरिद्वार पहुंचा। महात्माजी वहां एक धर्मशाला में ठहरे थे। उन के साथ नानागह? का एक सन्तराम नामक सेवक था। यह शायद वैशाखी का पर्व था। हमें धर्मसाला ~~का~~ में स्थान कहीं मिला। सब कमरे भरे हुए थे। हम रात बिताने के लिये स्थान की तलाश करते रहे। परन्तु कहीं जगह नहीं मिली रात के १२ बजने लगे थे। एक चुंगी का बरामदा मिला। वह भी धूल से भरा था। रात को हम वहीं सो गये। घूमते घूमते थक गये थे और फिर चलने की शक्ति नहीं रही थी।

सन्तराम जी पुलिसविभाग में नौकरी करते थे। वह पंजाब चले गये थे। महात्माजी के साथ मैं कुछ दिनों तक हरिद्वार में रहा। दिन को कनखल, ~~व~~ चण्डीभगवती का मन्दिर जो गंगा जी के उस पार पहाड़ीपर है देखने गये। गंगाजी से जो शारदा-कनाल निकाली है वहाँ पुल पर मैं और महात्मा जी खड़े गंगाजी की धारा को देख ~~रहा~~ रहे थे। बड़े भावावेश में बोले हम तो गंगाजी के तट पर अपना अन्तिमसमय बिताना चाहता हूँ। फिर जरा बहिर्मुख होकर हँसते हुए बोले जो ईश्वर की इच्छा। फिर कहने लगे देखो यह आसुरी युग है, उस समय भी नारियों का भारी बदला देते थे असुर लोग। इसी लिये देखो सप्तशती में शुम्भासुर के ~~क~~ मारने के बाद ~~[illegible]~~ का कौन लिखा है "स्वस्था मार्गावृत्ता:" अर्थात् उस दैत्य के मरने के बाद

नदियाँ भी अपने पूर्वमार्गों से चलने लगी थी।

कनखल में बैठे कुछ समय तक बैठे। वहाँ स्वामी जी ने गंगालहरी के कुछ पद्य मधुर ध्वनि से पढ़े।

हमें रहने के लिये किसी धर्मशाला में स्थान मिल गया था। अब भीड़ भी कम हो गई थी। एक दिन प्रातः गंगा जी के तट पर स्नान करते समय महात्मा जी ने जल में खड़े रहते गंगा जल हाथ में लिया। मुझ से कहने लगे 'श्रीनाथ! तुम यह जल ले लो तुम्हारे आर्थिक कष्ट दूर होंगे। मैंने हाथ जोड़ कर कहा नहीं महात्मा जी! मुझे आप की कृपा ही चाहिये। धन तो दुःख को लाने की चीज है। फिर उन्होंने जल पुनः गंगा जी में ही डाला। मैंने अनुभव किया शायद यह मेरी परीक्षा ही थी। परन्तु वह बार बार फिर कहे

कई प्रसंगों पर कहते रहते थे कि निःस्वार्थ सेवा करनेवाले बहुत कम लोग हैं।

यहीं कनखल पर उनको गंगा जी का दर्शन हुआ था। इस बात का वर्णन कई वर्षों के बाद महात्मा जी ने मुझसे किया था। बात इस तरह थी:–

वर्षा ऋतु था। स्वामी जी के साथ कुछ और दो तीन व्यक्ति बैठे थे। गंगा जी का पानी और प्रवाह बढ़ गया था। वर्षा भी उस समय हो रही थी। इतने में उन्होंने देखा कि बीच धार में कोई नारी तैर रही थी। उस की बालों की लटें पानी के ऊपर फैली हुई थी। कभी वह नारी सिर ऊपर उठाती थी और कभी फिर पानी में गायब होजाती थी। महात्मा जी ने अपने साथ बैठे हुए व्यक्तियों से कहा देखो वह औरत एक इतनी तेज धार में तैर रही है। परन्तु उन्होंने कहा हमें तो नहीं दिखाई देता। उन्होंने

बहुत बार देखा किन्तु उन्हें कोई नहीं दिखाई पड़ा। जब कि महात्मा जी देख रहे थे। इस के बाद महात्मा जी इस रहस्य को समझ गये।

-X-

X

हरिद्वार से महात्मा जी मुझे अपने साथ 'ऋषिकेश' ले गये थे। वहाँ से हम लक्ष्मणझूला गये। वहाँ से गंगा के पार 'गरुड़ चट्टी' गये। वहाँ स्वामी जी ने कहा कि "यहाँ पर जंगल में 'शिलोदक' झरना है।। इस में कोई भी नर्म वस्तु जैसे पत्तियाँ आदि पानी में पत्थर बन जाते हैं। मैंने देखा नहीं। महात्मा साधुओं से सुना है।" दिन डूबने लगा था। अतः उस विचार को भविष्य के लिये छोड़ कर हम फिर लक्ष्मणझूला आगये। गंगा जी के तट पर ही एक कुटिया थी। उसी में रात बिताई। सारी रात महात्मा जी ज्ञान विशेष कर दार्शनिक और भक्तों की चर्चा करते रहे। अभी भी उस रात को याद कर एक अवर्णनीय आह्लाद का अनुभव होने लगता है।

शिमला में महात्मा जी से फिर मिलन

सन् १९३९ में मेरी ~~विश्ववि~~- हिन्दू विश्वविद्यालय में कोर्स समाप्त होनेवाला था। मध्य में मुझे स्वामीजी का पत्र मिला, पत्र लिखा था हरिद्वार से। सोलन के राजासाहब के साथ हरिद्वार पधारे थे। मुझे लिखा था कि और जाते समय हरिद्वार में मुझ से मिलो। मेरे पास बहुत सामान था। मैं इधर कई बहुत समय से महात्मा जी से नहीं मिला था। दर्शन करने की बड़ी इच्छा थी। मैं सारा सामान लेकर हरिद्वार पहुंचा। परन्तु महात्मा जी एक दिन पहले ही सोलन चले गये थे। मेरे लिये सन्देश दे गये थे कि सोलन आजाना। मैं हरिद्वार से चलकर प्रातः दसबजे लगभग कालका स्टेशन पर पहुंचा। वहां से निराहार ही टैक्सी में बैठ कर दोपहर लगभग एक बजे सोलन पहुंचा। संकेतों के अनुसार राजा-

साहेब की एक कोठी पर ~~क~~ जो कि टीलेपर थी, आगया। मन में बड़ी उत्सुकता थी कि अब महात्माजी के दर्शन होंगे। परन्तु महात्माजी वहां से शिमला गये थे। सामान वहीं रखा। दैवयोग से राजा साहब के सैक्रेटरी भी शिमला जा रहे थे। उन के साथ कार पर ही बैठा। मगर शिमला पहुंच कर फिर निराशा होना पड़ा क्योंकि महात्माजी वहां भी नहीं थे वह शिमला से ६- मील दूर मशोबरा में राजा साहेब की वहां की कोठी पर रहते थे। मैंने मन में दृढ़ विचार किया था कि आज महात्मा जी का दर्शन करूंगा तभी भोजन भी ~~करूंगा~~ करूंगा। समय लगभग पांच बजे का था। मैं पैदल ही मशोबरा की तरफ चलने लगा। सूर्यास्त हो गया था। मैं तो अब निश्चिन्त सा हो गया था कि अब महात्मा जी यहीं मिलेंगे ही। परन्तु

महात्मा जी वहाँ भी नहीं थे। दो नौकर जो राजासाहेब ने महात्माजी की सेवा में रखे थे वह सामान बांध रहे थे। उन से विदित हुआ कि स्वामी जी 'नरसिंहपुर' में मेला देखने गये हुए हैं। यद्यपि मैं बहुत थक गया था और भूखा ही था परन्तु मैं अपने संकल्प के अनुसार तुरन्त ही नरसिंहपुर की तरफ चला। इतना सौभाग्य था कि उतराई का मार्ग था। मैं वहाँ से वह स्थान दो मील दूर रहा होगा। मैं साढ़े ७ बजे वहाँ पहुँचा। मेला लगा हुआ था। मैंने कुछ लोगों से पूछा। पता लगा कि महात्माजी 'टीका' साहेब [छोटे सामन्त] के साथ नृत्य देख रहे हैं। मैं वहाँ पहुँचा जहाँ लोकनृत्य हो रहा था। पहाड़ी लोगों की भीड़ थी। मैंने देखा महात्माजी 'टीका' साहेब के साथ कुर्सी पर बैठे थे। वो ही राजसी ठाठ थे। वेश भूषा भी वैसी ही। दो सिपाही नंगी तलवारें हाथ में लिये हुए ~~राजासाहेब~~ छोटे

टीका साहेब और महात्मा जी के दोनो बगलों में खड़े थे। बहुत समय महात्मा जी से मिले हुए को बीता था। मैंने समझा पता नहीं कैसा व्यवहार होगा। अन्दर घुसने की न तो आज्ञा ही थी न मैंने साहस करना उचित ही समझा। परन्तु मिलना तो आवश्यक था। अब की तो पीठ की तरफ मैं खड़ा था। मैंने एक लंबी सी पतली लकड़ी कहीं से उठाई और महात्मा जी के पीठ तक पहुंचा कर उस से उन का ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने पीछे की तरफ देखा। मुझे देखते ही तुरन्त कुर्सी पर से खड़े होगये टीका साहेब भी खड़े होगये। टीका साहेब से मेरा अधिक प्रशंसापूर्वक परिचय देने लगे। फिर कहा टीका साहेब! मैं अब जारहा हूं आप तो ले कई रात के लिये। परन्तु झटपट मेरे साथ चल पड़े। टीका साहेब को आग्रह नहीं माना। यह सब मेरे ख्याल मे पांच मिनटों में ही होगया होगा।

हम दोनों वहां से चलकर एक घण्टे में मशोबरा पहुंचे। भोजन करके वहीं एक कमरे में - जो केवल लकड़ी का बना हुआ एक सुन्दर बौठक की तरह लगता था। सारी रात महात्मा जी और हम बातें करते रहे। श्री जी को उस दिन कितनी प्रसन्नता हुई थी मैं सच हुम मन में ही अपने को भाग्यशाली मानने लगा। दूसरे दिन सवेरे उठे और तुरन्त अपनी नित्यक्रिया की। भोजन कर के नौकरों को सोलन चलने को कहा। हम उसी दिन साय ५-६ बजे सोलन पहुंचे। सोलन में मैं उनके साथ १०-दिन रहा। बहुत प्रचण्ड गर्मी थी। हमें भी महात्मा जी राजमाता जी के पास हमें बिठा कर भोजन कराते थे। माता जी बहुत आदर करती थी। हम दिन को नई योजनाएं बनाते थे। महात्मा जी ने यहीं पर स्वाध्याय पत्रिका निकालने की योजना बनाई थी। हम से लेख निरन्तर देते रहने के लिये कहा।

स्वाध्याय पत्रिका निकालने का मुख्य कारण यह था कि श्री हरदेवशर्मा त्रिवेदी' को जो कि ज्योतिषी मुकुन्दवल्लभ जी पत्रिका के प्रारम्भ में 'कुंवाली' (जालन्धर) में सहयोगी के रूप में काम करते थे। उन का पत्रकालों के साथ झगड़ा हुआ। और वह अब नया स्थान ढूंढ रहे थे। महात्मा जी के तो वह पहले ही परिचित होगये थे। उन को अब वह सोलन में ही राजा साहेब की कृपा में रखने का प्रयास कर रहे थे। उन को कोई काम भी मिल जाय और उन के ज्योतिष का काम भी चलता रहे इसलिये 'त्रिवेदी' जी को सोलन में ही रहने का विचार बना रहे थे। इसी उद्देश से 'श्रीस्वाध्याय' पत्रिका को त्रैमासिक क्रम से प्रकाशित करने की योजना बन गई थी। उन दिनों पं. हरदेव जी वहां नहीं थे अतः योजना को साकार रूप दिया नहीं दे सके। मैं तो 'कश्मीर' आगया तथा महात्मा जी वहीं रहे थे।

लायलपुर [पश्चिमीय पंजाब] में

~~सन~~ सन् ४१ ई० में लायलपुर में नौकरी करने लगा था। ~~शीघ्र~~ ~~पर~~ शायद नवम्बर का महीना था। और सन् भी ४१ ई० ही था। मुझे वहां रहते हुए कुछ ही महीने हुए थे, महात्मा जी के आदेश के अनुसार श्री हरदेवशर्मा भी मेरे पास आगये। 'श्री स्वाध्याय' के प्रकाशन तथा प्रचार के सम्बन्ध में दो दिन विचार करते रहे। मैंने भी लेख दिया जैसा कि महात्माजी ने ही कहा था "कश्मीरी पण्डितों का संस्कृत साहित्य में योगदान" ऐसा ही कुछ लेख था। ~~स्वा~~ श्री स्वाध्याय का प्रथम ? अंक के पहले संस्करण में मुद्रित हुआ था। श्री हरदेव जी दो दिन रहे। फिर सोलन चले गये। अस्तु 'श्री स्वाध्याय' त्रैमासिक के रूप में ही निरन्तर छपता रहा और मैं भी लेख भेजता रहता था। यह पत्र अल्प समय में ही प्रसिद्ध होने लगा था। परन्तु कुछ वर्षों के बाद ही बन्द हुआ। इस का कारण मुझे पूर्ण रूप से पता नहीं।

महात्मा जी का 'लायलपुर' (पाकिस्तान में) आगमन

सन १९४३ का शायद नवम्बर मास था। मैं स-धा. ब्रह्मकुल आश्रम में प्रोफेसर और चिकित्सक के पद पर आसीन था। यह आश्रम गोस्वामी गणेशदत्त जी के द्वारा प्रतिष्ठापित हुआ था रावी की एक बड़ी नहर पर अवस्थित था। ब्रह्मकुल की परिपाटी के अनुसार संस्कृत हिन्दी एवं अंग्रेजी की शिक्षा दी जाती थी। पण्डितों का जैसा शास्त्र और पठन पाठन का ही वातावरण था। दो सौ के लगभग विद्यार्थी थे। उन को भोजन भी निःशुल्क दिया जाता था साथ में एक गोशाला भी थी। मुझे भी क्वार्टर मिला हुआ था और मैं वहाँ छात्रावास का भी अधिष्ठाता (सुपरिंटेंडेंट) था। मक्खन से चुपड़ कर रोटियाँ सब्जियाँ आदि भोजन में प्रातः सायं विद्यार्थियों को दी जाती थी। रात को एक एक पाव दूध प्रत्येक विद्यार्थी को मिलता था।

~~श्री~~ जी जब मेरा विवाह भी उसी वर्ष हुआ था अतः मैं गृहस्थी की तरह अब वहां रहने लगा था। (आश्विन मास था। ~~नवरात्रि~~ नवरात्रि के दिनों के बाद ही महात्माजी वहां पधारे। उन को वहां पर बहुत मन लगा क्योंकि यहां उन को गायका दूध, शुद्ध भोजन तथा घूमने के लिये नदी का किनारा जैसा कि उन्हें ~~अभीष्ट था~~ चाहिये था- सब सुलभ था। दिन भर हमारी साहित्यिक तथा शास्त्रीय चर्चा चलती थी। शरीर में कुछ दैवी बिमारियां होती थीं। महात्माजी के ~~पास~~ रहने से सब दूर होगई। मुझे प्रातः ही उठ कर गोमूत्र का प्रबन्ध करना पडता था क्योंकि महात्माजी रोज गोमूत्र से कुल्लियां करते थे। रहते रहते महात्माजी वहां आठ मास रहे। बहुत ज्ञान की चर्चा होती थी वह समय याद आता है मालूम पडता है वह सतयुग का ही समय था इस बात को यहां लिखी में भी

वहाँ ~~दिल्ली में~~

महात्मा जी ने कई बार कहा। महात्माजी रात को हम को और हमारी पत्नी को बड़ी विस्मयकारक और अपने साथ बीती हुई कथाएं सुनाते थे। उन्होंने मुझे कहा था कि इन कथाओं पर "अद्भुतकथाएं" नाम देकर एक संग्रहात्मक पुस्तक लिखना। परन्तु यह उन का कथन अभी तक क्रियान्वित नहीं हो पाया।

जैसा कि महात्मा जी का स्वभाव था ~~मुझे कहा कि~~ मुझे आते ही कहा कि देखो यहाँ पर मेरा परिचय किसी को नहीं देना। मैं तो किसी से उन की कोई बात नहीं करता था। वहाँ संस्कृत के कई विद्वान् थे जोकि वहां पर अध्यापन करते थे। मुझे पूछते रहते थे परन्तु मैं टालता रहता था। मेरा उन के साथ व्यवहार भी वह देखते थे और वह समझ जाते थे कि यह इन के गुरु हैं। मैं संस्कृत की शास्त्री कक्षाओं को भी पढ़ाता था। सब मेरा बहुत सम्मान करते थे। मुझे कहते थे कि ~~मन्त्र~~ ~~कर्क~~ कृपा आप के गुरुजी आये हैं। मैं टालता था।

एक दिन मेरा एक अध्यापक जो न्यायाचार्य और व्याकरणाचार्य भी थे। संस्कृत में ही वादविवाद हुआ। कौन जीता? कौन हारा यह तो अलग बात थी परन्तु वास्तव में लड़के भी उस पण्डित जी की पर- हँसते थे। मेरे मन में कुछ संशय रहा। मैंने रात को महात्माजी से बात की हमारी शंका का समाधान होगया मेरा ही पक्ष ठीक था। इतने में दरवाजा खटखटाने लगा दरवाजा खोला तो अध्यापक और कुछ लड़के जो हमारा कथोपकथन सुन रहे थे, - अन्दर आगये। फिर महात्माजी स्वयं प्रकट होगये। इन में स्वर्गीयपण्डित जगदीशचन्द्र जी उन दिनों वहाँ पढ़ाते थे - महात्माजी के भक्त होगये और महात्माजी को अपने घर फुलरवान (पाकिस्तान) ले गये। वहाँ भी कुछ महात्माजी के बहुत से सेवक बन गये थे जो अब देहली, मथुरा आदि नगरों में रहते हैं। श्रीरघुनाथचन्द्र शास्त्री भी गुरुकुल में अध्यापक थे। अब डेहरादून में रहते हैं। यह भी महात्माजी के भक्त बन गये थे।

यतिकुला आश्रम लाडलपुर (जि. फैजाबाद) में महात्मा जी की एक घटना और भी लिखता हूँ। है तो बात वैसे कुछ नहीं परन्तु इस से महात्मा जी को कितना क्रोध कभी कभी आता था इस का आभास लगता है :-

महात्मा जी ने हमारे क्वार्टर के आँगन में एक रस्सी पर अपने नहाने के तौलिये आदि सुखाने के लिये डाले थे। उन में उन का एक लालरंग का लंगोट भी था। उस को वहाँ के एक रसोइये ने कहीं लकड़ियाँ जलाते समय दूसरे स्थान पर लटकाया था उस पर कौए ने बीट कर दी थी। महात्मा जी ने देखा तो बहुत बिगड़ गये उस प्राणी को बुलाया और बहुत डाँटा। उस ने कुछ कहा होगा इस पर स्वामी जी बहुत क्रोधित हुए। हमारी पत्नी उन से हाथ जोड़ कर क्षमा माँगने लगी, आइसाचल और लड़के भी कुछ आगये और क्षमा माँगने लगे। वैसे तो वह रसोइया बहुत शरीफ था। परन्तु मुझे कहने लगे इस को अभी निकालो नहीं तो मैं यह स्थान अभी छोड़ दूंगा। मैं बहुत किंकर्तव्यविमूढ़ होगया। बहुत देर बाद

शान्त होगये। वैसा क्रोध मैंने उसी दिन महात्मा जी को करते देखा। ये तो आशुतोष जी ही थे जैसा कि महाकवि कालिदास ने कहा है:—

"उष्णत्वमग्न्यातपसंप्रयोगात्
शैत्यं हि यत् सा प्रकृतिर्जलस्य"

अर्थात् अग्नि या धूप में रख कर जल भले ही गर्म होजाय परन्तु फिर ठंडा ही होजाता है। क्योंकि शीतलता जल की अपनी प्रकृति है।

लायलपुर से महात्माजी और भी कई स्थानों पर घूमते हुए फिर लाहौर हमारे पास आये थे इन में गोजरा, हिसारवाला, आदि कुछ मुख्य हैं। यह सब अब पाकिस्तान में चलेगये हैं। स्वामीजी का सेवक कोई सेठी नामक सज्जन था। अब तो वह शायद यहीं कहीं रहते हैं। उन से मिलने के लिये ही महात्मा जी उस तरफ गये थे। ऐसा मुझे याद है।

महात्मा जी
मुजफ्फराबाद [कश्मीर]
में

सन् १९४६ में महात्मा जी मुजफ्फराबाद [कश्मीर] में थे जो यह अब तथाकथित आजाद कश्मीर में है। यहां पर उन्होंने एक ऐसा स्वप्न देखा था जिस से यह उनको स्पष्ट आभास हुआ था कि यहां पर कुसंग होगा और हिन्दुओं पर घोर संकट आयेगा। इस की सूचना स्वामीजी ने अपने भक्तों को जो कश्मीर में रहते थे-पत्र द्वारा दी थी। मुझे भी सन् १९४६ की गर्मियों में मार्तण्ड में पण्डित शिवजी कोतेदार ने पत्र दिखाया था। यद्यपि उस समय पाकिस्तान सीमाप्रान्तों में उपद्रव शुरू होगये थे। भी इस और इस की सत्यता पर विश्वास करना उचित ही था परन्तु तो भी इस पर शतप्रतिशत कौन विश्वास करता। फलतः १९४७ के भारत विभाजन के समय यह सत्य ही प्रमाणित हुआ।

भारत विभाजन के बाद
देहरादून में मिलना

१९४६ में मैं कश्मीर अपने घर ही आगया। मेरे पूज्य पिताजी का स्वर्गवास होगया। मैं ~~अब~~ अपने गांव में ही क्लीनिक खोलकर प्रैक्टिस करने लगा। काम बहुत अच्छा चला। अनेक संकट आये, व मुझे पद पद पर महात्मा जी की ~~अब~~ उपस्थिति का अभाव खटकता था। यद्यपि मैं किसी अन्तःप्रेरणा से यह निश्चित रूप से समझता था कि महात्मा जी कहीं न कहीं अवश्य सुरक्षित रूप से होंगे। परन्तु कहाँ? किस से पूछें? कुछ समझ में नहीं आरहा था। मैं कश्मीर से अपने सम्बन्धियों को खोजने के लिये सन् १९४९ के जनवरी मास में रास्ता खुलने पर सपत्नीक अमृतसर आगया। वहां से कपूरथला लुधियाना होता हुआ दिल्ली आगया। परन्तु महात्मा जी कहीं पता न चला और ऐसा कोई परिचित भी नहीं मिला जो महात्मा जी का कुछ पता देता। मेरा एक सहपाठी

जो मेरा अभिन्न मित्र था और एक संपन्न गढ़वाली परिवार का था। उस से मिलने के लिये मैं देहरादून गया। यहां अपने मित्र गंगाप्रसाद अग्रवाल के घर सहारनपुर रोड पर गया। परन्तु मेरा मित्र अब इस संसार में नहीं था। मेरा एक कम्पाउडर ताराचन्द गुप्त थ जो लायलपुर में मेरे साथ सच्चिकुल आश्रम में मेरे साथ काम करता था। उस ने मुझे अपने घर आने के लिये जोर किया। उनके घर में ५-७ दिन रहा। ताराचन्द मुझे कहने लगा कि डाक्टर जी मुझे एक बात आप से कहनी थी परन्तु कैसे कहूं? मैंने कहा कौन सी बात है? संकोच क्यों करते हो? कहो। उस ने कहा कहना ही उचित है कहता हूं। और बोला आप के वह गुरुजी जो आप के पास लायलपुर में रहते थे, यहीं आजकल विराजमान है। मैंने उन से कहा था डाक्टर जी का शायद यहां आगमन हो क्योंकि उन का पत्र आया था। उन्होंने मुझ से कहा है कि देखो उन को आप मेरा पता नहीं बताना। कुछ नहीं कहना।

मैंने कहा पता है कि वह कहाँ ठहरे हैं, उन्होंने कहा कि पता तो उन्होंने नहीं बताया परन्तु वह हमारी दुकान के सामने सामने से कभी कभी गुजरते मैंने देखे है। एक दिन फिर दैवयोग से ही महात्माजी पलटन बाजार में जाते हुए मिले। बड़ा हर्ष होगया। वह उन दिनों अपने एक सेवक के पास ठहरे थे। यह स्यालकोट (पंजाब के रहनेवाले थे और अब गैरीसन इंजीनियर का काम करते थे। महात्माजी के अत्यन्त प्रेमी और सेवक थे मैं भी महात्माजी के साथ वहाँ एक दो रात रहा था। इस के बाद मैं उन की आज्ञा लेकर चला देहरादून से फिर दिल्ली और बाद में कश्मीर आगया था। फिर महात्माजी के पत्र भी यदा कदा आते रहते थे। अब तो पुनः पूर्ववत् सम्पर्क स्थापित होगया था। हाँ महात्माजी ने मुझे दिल्ली में श्री पं. गोविन्दजी मिश्र - जो भरतपुर के निवासी थे - से मिलने को कहा था। मैं दिल्ली में उन से मिला था और उन का भी पूरा संसर्ग शुरू होने लगा था।

भरतपुर में पुनर्मिलन

यों तो महात्मा जी यायावर वृत्ति के थे। उन का पत्र साल में एकाध बार ही आता था। परन्तु उन का ठिकाना मोतिलाल जी मिश्र का भरतपुर वाली कुटी ही हो गया था। मैं कश्मीर से अब दिल्ली आ गया था। यहां पर मुझे १९५८ में मुलकी खैराती शफा खाना अस्पताल में नौकरी मिल गई थी और एक मैं अब सन् १९५९ के अगस्त मास में दिल्ली में ही रहने लगा था। यहां पता चला कि महात्मा जी भरतपुर में विराजमान हैं। मैं दर्शन करने के लिये एक महीने के बाद ही भरतपुर चला गया। महात्मा जी उस समय मिश्र जी के घर पर नहीं रहते थे एक पास की ही पहाड़ी पर एक कुटिया में साधना करते थे। मिश्र जी कहने लगे कि स्वामी जी १२ बजे तक आ जायेंगे मैंने कहा इसलिये वहीं चलते हैं। वह और हम मैं दोनों वहां गये। महात्मा जी ने पद सुनकर दरवाजा खोला

गुरु की बातें महात्माजी जेशत्रुका से कुछ
बदले हुए लगे। लेकिन तो उन का उसी प्रकार
था। लगभग अड़े नौ सालों के बाद
पुन की बार दर्शन हुआ था। उस रात वहीं
मैं मिश्र जी के घर रहे। दूसरे दिन मेरे साथ
स्वामी जी दिल्ली आये थे। मेरे पास मुलचन्द हस्पताल
में ही दो दिन ठहरे थे। मेरा परिवार अभी तक
कश्मीर में ही था। मैं अकेला ही रहता था। दिल्ली
स्वामी जी के और भी भक्त बन गये थे। जिन में
श्री वैद्यराज बृहस्पति त्रिगुणा थे। वह सराफकाले रन्नि
निजामुद्दीन दिल्ली नईदिल्ली में रहते थे उन के
घर महात्माजी रहने लगे थे। फिर हिन्दुस्तान
हाउसिंग फैक्टरी जंगपुरा में, श्री
बी.डी. बकशीसाहेब के यहां रहते थे।
श्री भवानीशंकर त्रिवेदी भी उनदिनों मोती
बाग में रहते थे। इन सब भक्तों के
पास भी यदा कदा रहते थे।
कुछ समय श्रीनिवासपुरी में रहनेवाले
नित्यानन्द जी के घर पर रहते थे।
उन्हें

*

मानसरोवरगार्डन दिल्ली में उनके ~~सेवा~~ भक्त श्री के. के. आनन्द साहेब रहते थे। उनके घर पर महात्माजी बहुत दिनों तक रहते थे। मैं उन दिनों तिब्बिया कालेज में रहता था फिर पं. हरिनगर में रहने लगा था। महात्माजी इन दोनों जगहों पर मानसरोवर गार्डन से मिलने आते थे और मैं भी जाता रहता था। ७१ ७२ के कार्तिक के महीने में भी वहीं रहते थे और मैं उनकी आज्ञा लेने मानसरोवर गार्डन आया था। महात्मा जी ने पूरी सहमति मेरे 'मथुरा' जाने के लिये प्रकट नहीं की। मुझे मथुरा में श्रीकृष्णजन्मभूमि में ~~वैद्यनाथभवन~~ वैद्यनाथ आयुर्वेद फार्मेसी के प्रतिष्ठापक स्वर्गीय श्रीरामनारायण शर्मा जी ने अपने नये खोले हुए आयुर्वेद अनुसन्धान केन्द्र में आने के लिये अनुरोध किया था इसी सम्बन्ध में, मैं महात्मा जी से वहां ~~मिलने~~ उस समय मिलने आया था।

श्री बालकेलाल जी सपरिवार उन दिनों श्री निवास पुरी में रहते थे। प्रबल तो महात्माजी के दिल्ली में बहुत से भक्त और सेवकों का मण्डल सा बन गया था। जब कभी महात्माजी पंजाब या अन्यत्र जाते थे दिल्ली में वापिस आते थे और आते ही सब भक्तों को सूचित करते थे। फिर तो सभी श्रद्धालु उनके पास स्वयं आते ही रहते थे।

~~सब~~ जब महात्मा जी रो पड़े थे

सन १९६५ के सितम्बर का महीना था भारत और पाकिस्तान का युद्ध चल रहा था। हमारा लड़का अश्विनी कुमार जो उन दिनों ~~उ~~ दस वर्ष का ही था और दूसरी श्रेणी में पास के हाईस्कूल में पढ़ता था - ~~एक~~ शाम को घर नहीं आया। हमने हर ~~जगह~~ जगह तलाश किया परन्तु कुछ पता न चला बाद में हम ने समझा कि उस का अपहरण किया गया होगा। ~~को~~ पास के लाजपत नगर थाने में भी रिपोर्ट की। महात्माजी उन दिनों श्री निवास पुरी मे रहते थे। रोज हमारे पास शाम को आते थे।

हमारे परिवार वालों का बहुत बुरा हाल था।
~~हाथ~~ 'ब्लैक आउट' होता था तो भी
हम रात को भी ~~छेद~~ दूंढते ही रहते थे।
जब महात्माजी आये और उन को बताया
वह तो बालक की तरह रोने लगे। यद्यपि मैंने
उन को कभी भी ~~पहले~~ पहले या बाद में भी रोते नहीं
देखा ~~है~~ है। हमें सान्त्वना ~~देते~~ देते थे।
प्रातः फिर आये कहने लगे चिन्ता मत करो।
आजायेगी। ~~आठ~~ दिन तक महात्मा जी दिन में
~~२~~ दो दो बार श्रीनिवास पुरी से हमारे पास
आते थे। कहते थे अभी तक नहीं आया। मैं जब
ध्यान में बैठता हूं मुझे तो लगता है आरहा
है। मुझे इस से होसला तो होजाता था
परन्तु उधर दिन बीत रहे थे कहीं से कुछ
पता नहीं चलता था। ~~आठ~~ दिन के बाद जैसा
कि उन्होंने कहा था 'सोमवार' को पप्पू आयेगा
ठीक उसी दिन, वह घर स्वयं ही आगया।
बाद में उस के विवरण से इस बात का सबूत
पता चला कि वह अन्नवाई लेजाया गया था।
मुझे महात्मा जी का वह रोना और उनकी
वह तडपन जब जब याद आती है मन
में उन की वह स्नेह भावना मेरे अन्तस्तल
को अब भी छूती हुई सी प्रतीत होती थी।

उन जैसे वीतराग ज्ञानी महात्मा का इस
प्रकार रोना और उन का रोज श्रीनिवासपुरी
से मेरे क्वार्टर मूलचन्द हास्पिटल तक दो दो
बार आना मैं या हमारा परिवार
कभी नहीं भूल सकता। यह उन के आशीर्वाद
और भावना का ही प्रभाव था जो बम्बई
जैसे दूर शहर से अबोध केवल छः वर्ष की
अवस्था वाला बालक स्वयं सकुशल घर पहुंचा।
और वह भी उस समय में जब रात को
ब्लैक आउट होता था और दिन को भी
कई रंग का वातावरण बनता जाता था।

जहाँ जहाँ महात्माजी को विशेष चमत्कार देखने को मिले :-

प्रद्युम्न (शारिका) पर्वत श्रीनगर कश्मीर -

यह घटना सन् १९२० से १९२५ के वर्षों में हुई होगी। महात्माजी ने कहा वह शारिकादेवी के आंगन में - जिस को 'देवी-आंगन' के नाम से कहा जाता है - एक दिन सायं भजन कर रहे थे। एक पण्डित - जो तेजस्वी और कश्मीरी वेशभूषा में था - वहाँ आया। और महात्माजी को देखता रहा। फिर सामने आकर पूछने लगा "बाबाजी 'मायाकुण्ड लिनी' सुनाओ ['माया कुण्ड लिनी' इत्यादि का पद्य 'पंचस्तवी' के लघुस्तव का है पद्य और प्रायः कश्मीरी पण्डितों की महिलाएं भी इस को जानती और बोलती थी] महात्माजी ने सुनाया। आगन्तुक ने कहा और भी सुनाओ महात्मा जी ने सुनाया। फिर उन्हों ने भी इस पर कुछ अर्थ की व्याख्या की। महात्माजी बड़े प्रभावित हुए। आगन्तुक ने कहा आप चला मेरे निवासस्थान

पर आजान नहीं बातें करेंगे। उन्होंने पता भी बताया। दूसरे दिन महात्माजी १२ बजे ही उस संकेतित स्थान पर [हुक्काकदल] पहुंचे। दरवाजा खुला ही था। महात्माजी सीढ़ियां चढ़कर ऊपर एक सुसज्जित कमरे में पहुंचे। वह पण्डितजी वहीं विराजमान थे। महात्माजी उन के वार्तालाप में लीन रहे और उन्हें बहुत सी शंकाओं का समाधान हुआ। उस पण्डितजी ने बारबार कहा मैं तो तुम्हारे ही लिये भेजा गया हूं। परन्तु महात्माजी इस का ~~रहस्य~~ रहस्यमय संकेत को नहीं समझे। पण्डितजी ने कहा अब शाम हो रही है जाइये। महात्माजी चलने लगे और कहा श्रीमान जी मैं कल फिर इसी समय आऊँगा। पण्डितजी चुप रहे कुछ नहीं बोले। दूसरे दिन महात्माजी ठीक इसी समय वहां पहुंचे परन्तु वह दरवाज़ा बन्द था और ऐसा लगता था जैसे कई वर्षों से यह बन्द ही है। महात्माजी इधर उधर देखने लगे कि कहीं यह और जगह तो

नहीं। परन्तु जगह वही थी। महात्माजी ने उसी मकान के सामने वाले घर में आवाज दी। वहां से एक आदमी निकला। महात्माजी ने कहा क्यों जी। इस मकान में जो पण्डितजी रहते हैं वह कहां गये हैं? उस आदमी ने हैरान होकर कहा यह तो कई सालों से बन्द ही पड़ा है आप किस की बात बतारहे हैं। यह तो २० वर्षों से बन्द ही है। इस मकान का वारिस तो अब कलकत्ता में रहता है। महात्माजी बड़े विस्मित होगये और उन्हों ने फिर कलवाली बातें जो उस रिक्शवाले के साथ हुई थी मन में याद की और उस का ~~रहस्य~~ रहस्य समझने लगे।

कोटीतीर्थ बारामूला में (शैलपुत्री में)

यहां पर महात्माजी को एक प्रकार से आत्मसाक्षात्कार या तत्वज्ञान हुआ था उन्होंने जैसे कि सारीरात ~~ही~~ अपने आप में ही विराट के दर्शन किये थे, ~~वह~~ और उन्हे यह भी प्रतीत नहीं हुआ कि रात कैसे व बीती।

~~इसका~~ इस का वर्णन वह क्या ~~कर~~ करते यह तो अनिर्वचनीय अवस्था थी। ~~है~~ जैसे श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय में

"आश्चर्यवत् पश्यति कश्चिदेनम्"

इत्यादि पद्य से इस की अवर्णनीयता को भगवान् ने कहा है।

"पञ्चतरणी" अमरनाथ कश्मीर में

जैसा कि पहले लिख दिया है यहां पर महात्माजी को आदिनाथ यौनमुद्रा में शिवपार्वती का दर्शन ~~प्रात~~ मध्यरात्रि काल में हुआ था। स्वामी जी टेन्ट से बाहिर लघुशंका करने निकले थे और यह दृश्य देखा। वह खड़े खड़े ही देखते रहे जब तक प्रभात का समय होने लगा था।

साधुगंगा आश्रम कश्मीर में

यह स्थान कश्मीर के पश्चिमोत्तर प्रान्त में अवस्थित था। उन दिनों अर्थात् विभाजन के ~~पूर्व~~ से पहले यहां साधुमहात्मा ठहरा करते थे। यहांपर महात्माजी को कई दिव्य और सिद्ध महापुरुष

दिखाई दिये थे। जिस से जान जाते
हुई थी यह उन्होंने नहीं कहा या मैंने ही
नहीं पूछा यह अब याद नहीं।

मथुरा में समागम

मैं सन् १९६९ से सन् १९८६ तक मैं मथुरा में था - मैं श्रीकृष्ण जन्मस्थान के ट्रस्ट के अन्तर्गत जैस्वाल कमेटी द्वारा संचालित आयुर्वेदिक - अनुसंधान केन्द्र में था। श्री जी यहां इन आश्रमों में प्रायः दिल्ली या महाराष्ट्र आते जाते रहते थे और मथुरा में भी कई दिन ठहरते थे एक बार तो लगभग एक मास तक सर्दियों में रहे थे और फिर दो तीन बार गर्मियों में भी १०-१२ दिन रहे थे थे। खूब हमारी बातें चलती थीं। परन्तु अब तो महात्मा जी का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था। मैंने कईबार उन से

अनुरोध किया था कि आप अब यह धूनी के
रहने का व्यापार छोड़ दीजिये ऐसी आधानी
परिस्थिति में रहना आप के स्वास्थ्य
को और भी कमजोर करेगा। कई बार तो
मैं उकताहट के ढंग से उन्हें सरोष भी कहता
था। वह चुप रहते थे। किन्तु मेरा
विचार है कि वह आखिरी वर्षों में जो
करीब दस वर्ष तक ~~धूनी~~ दिल्ली में
ही रहे यह शायद मेरी सम्मति को
उन्होंने समझ लिया था।

मथुरा में वह 'भूतेश्वर' के दर्शन
करने रोज जाते थे। 'महाविद्या' के मन्दिर
में भी जाते रहते थे।

'श्री' जी के कुछ पद्य—(फुटकर) अन्योक्तियाँ

(यह उन के मुख से मैंने सुने हैं
जो मुझे याद हैं)

कासार प्रति:—

हे रे! कासार! मुधा विषादमसि
मा मानसे त्वं कुरु ।
पङ्कौघेन युतं वहामि कुपयो ध्यायन्न सैवं हृदि,
पृथ्वीपाल-वधू-विलोचन-मनोहारीणि ते वारिणि,
जायन्ते कमलानि यत्र मधुपव्रातैः सुरवं शीयते ॥

पिकं प्रति

सहृदय पिक याते माकमस्था कदाचि-
त्प्रकृति-मधुरवाक्त्वं कृष्णदेहे निरीक्ष्य ।
विलसति मधुमासे मानसे मोहयन्तो
धवलतनुबकाः किं सौख्यमुत्पादयेयुः ॥

चन्द्रोदय विषये (मित्रं प्रति)

तृतीयायां कश्चित् तुहिनकिरणं
वीक्ष्य वियति,
प्रदोषे सोल्लासं सवयसमथोवाच
रसिकः ।
अये मेघालेखा विलसति च बिम्बं
न शशिनो,
नु मन्ये कामिन्याः प्रसृति विधृतः
कन्दुक इति ॥

समस्यापूर्ति कृते (श्रीकृष्णस्य भगवतो वर्णनम्

कदा भामा भामापनयन् कदाभाति रहसि,
सुदामानं कामं पुनरपि कदा भाति महयन्
कदा सिन्धोः पश्यन् बहलसुभगा स्फुट लहर-
मुदा द्वारावत्यां विहरति सदा सं यदुपतिः ।

मलयपवन विषये

चिरभ्रान्तो दूरादहमुपगतो हन्त
मलयात् -
तदेनां त्वद्दोर्दे सुमुखि परिरब्धां नीर

~~समीरेण~~

समीरेणोद्धूतं नवकुसुमिता चूतलतिका,
धुनाना मूर्धानं नहि नहि नहीत्येव कुरुते ॥

भगवती प्रति विनयेऽभ्यर्थनम्

अयि मां नव शक्ति भामिनि
शरणं के करवाणि सम्प्रतम् ।
त्वदृते नहि कश्चिदस्ति मे,
वसुधायां शरणं मनागपि ॥

नव लोचन-गोचरा न किं
सकलेऽसि मम दुःखशान्तिके ।
समलङ्कुरु मंगलेन मां
समलं मां किमु शंकसे सुतम् ॥

अष्टधातवी वृन्त :
इस वृन्त का निर्माण श्री ? जी के एक किया था और एक वहीं पद्य भगवान राम की वन्दना में लिखे थे । मुझे तो इस का केवल एक ही चरण याद है जो इस प्रकार है :

"श्रीरामचन्द्र महनाताधरे
भवसि धारा प्रणाम नमुनम्"